'महासमर' में अभिव्यक्त लोकपक्ष

हेलन मेरी ए. जे.

'लोक' शब्द के विभिन्न अर्थ मिलते हैं, पर मुख्यतः दो ही अर्थ विशेष रूप में प्रयोग करते हैं। पहला अर्थ स्थान विशेष के अर्थ में होता है। इसका तात्पर्य अमुक प्रदेश के सांस्कृतिक आचरण, भाषा, अनुष्ठान आदि से है। 'लोक' शब्द का दूसरा अर्थ 'जनसामान्य' है। यहाँ 'लोक' का आशय जनपद या गाँव में बसने वाले साधारण जनता से नहीं बल्कि नगरों एवं गाँवों में फैली हुई समूची जनता से है।

जनता दो पक्ष के हैं, ऊँचे सिरे की जनता और हाशियेकृत जनता। 'लोकपक्ष' हाशियेकृत जनता पर केन्द्रित है। याने कि लोकपक्ष में उपेक्षित जनता की अभिव्यक्ति की जाती है। साहित्य में लोकपक्ष का आशय साधारण जनजीवन की अभिव्यक्ति से है। समाज की सभी समस्याओं के केन्द्र में साधारण जनता या लोक है। जनता के पक्षधर रहना साहित्यकार का फर्ज़ है। समकालीन साहित्यकार सामान्य जनता की समस्याओं का पोल खोल करके सामाजिक दायित्व को पूर्ण रूप में निभाते हैं। वैश्वीकरण के नकारात्मक पक्ष को झेलने वाली सामान्य जनता, दलित, नारी आदि सब लोकपक्ष से जुड़े जाते हैं। साम्राज्यवादी शक्ति पूरे समाज को शोपित करते हैं। समकालीन रचनाकार साधारण जनताओं की समस्याओं को व्यक्त करके अपनी रचना में मानवता पक्ष को उजागर करते हैं।

हेलन मेरी ए.जे.
शोध छात्रा, कोच्चिन विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय

Scanned with CamScanner

नरेन्द्र कोहली सामाजिक चेतना से युक्त समकालीन रचनाकार हैं। उनके 'महासमर' उपन्यास शृंखला में समसामयिक समाज की धड़कनें पूरी तरह विद्यमान है। पौराणिक इतिवृत्त के ज़मीन पर खड़ा होकर सामान्य जनता की समस्याओं को पेश करके उपन्यास के समकालीन सरोकार को उजागर किया गया है।

राजनीतिज्ञों की दायित्वहीन स्वार्थांधता ने वर्तमान परिवेश में इतनी अव्यवस्था एवं अराजकता फैला दी है कि कहीं भी कोई भी सुरक्षित नहीं है। जब रक्षक ही भक्षक बन जाते हैं तो आम जनता की स्थिति और भी दुविधाग्रस्त हो जाती है। वे निरन्तर राक्षसी प्रवृत्तियों के शोषण का शिकार होते रहते हैं। इसी समकालीन शोषण को नरेन्द्र कोहली ने 'महासमर' में प्रस्तुत किया है। वाराणात के अग्निकांड से बचने के बाद कुंती अपने पाँचों पुत्रों के साथ छिपते-छिपते एकचक्रा नगरी में पहुँचती है। एक सामान्य ब्राह्मण परिवार में वे शरण लेते हैं। यहाँ की शासन व्यवस्था बहुत ही अराजकता पूर्ण है। ब्राह्मण कन्या और कुंती का संवाद जनसामान्य के शोषण के समकालीन बोध को उजागर करता है...

देवप्रसाद ने कुंती को बताया..."एकचक्रा नगरी में अराजकता बहुत बढ़ गई, इसी से सभी आशंकित हैं। राजा यहाँ रहता नहीं। आपके पास धन और बल हो तो आप कुछ भी कर सकते हैं। कोई पूछने वाला नहीं, कोई दंडित करने वाला नहीं, अनेक घटनाएँ इस प्रकार की हो गई।"[1] दुशासन में सामान्य जनता की दुविधापूर्ण ज़िन्दगी हमें देवप्रसाद के वार्तालाप से पाई जाती है।...नगर की स्थिति बताते हुए देवप्रसाद फिर बोला, "कुछ असाधारण आततायी गुण्डे हैं। कुशासन से बल पाकर सिंह बने घूमते हैं। शरीर का बल है...उसी का लाभ उठा रहे हैं। नियमित अपराधी हैं, हत्याएँ ही उनका व्यवसाय है। कोई उनसे लड़ने का साहस नहीं कर पाता।"[2] गुण्डों के राज्य में आम आदमी का शोषण मानवजीवन की दुःखद घटना है। व्यवस्था के प्रति विद्रोह की भावना लेकर जी रहा है समकालीन मानव। इसी घुटन, आक्रोश और विद्रोह का पर्दाफाश उपन्यास के द्वारा कोहली ने किया है।

नरेन्द्र कोहली ने सामान्य जनता की समस्याओं और उसे एक नई दिशा देने का प्रयास किया है। आजकल की युवा पीढ़ियों की एक महत्त्वपूर्ण समस्या है बेरोज़गारी। सामान्य जनता सुशिक्षित होने पर भी अपनी योग्यता के अनुसार उसे नौकरी नहीं मिलती है। नौकरी की तलाश में वे लोग सड़कों पर मारा-मारा फिरते हैं। पैसों के बल पर नौकरियाँ खरीदी जा रही हैं। जिसके पास पैसा नहीं है वह सारी योग्यताओं के बावजूद भी बेकार हो जाता है। इसलिए वह मानसिक तथा शारीरिक यातनाएँ सहते हुए किसी तरह से जीवन निर्वाह कर रहे हैं।

बेरोज़गारी के इसी समकालीन बोध को कोहलीजी ने आचार्य द्रोण की बेरोज़गारी के माध्यम से 'महासमर' में अंकित किया है। एक परम शस्त्र विशारद आचार्य को जब बेरोज़गारी के कारण धन के अभाव में जो मानसिक, शारीरिक एवं

पारिवारिक यातनाएँ सहनी पड़ी हैं उस पीड़ा में आज के सुशिक्षित नौजवान की पीड़ा नज़र आती है। द्रोण दुखी मन से अपनी पत्नी कृपी से बोले, "मेरा परिवार भूखा और कंगाल है। क्या यह मेरे पाप का फल नहीं है?...मैंने लक्ष्मी का अपमान किया है। यह उसी का फल है। मुझे विधाता ने जो विद्या दी है उससे बहुत कम में लोग धनाढ्य, शूर-वीर और चक्रवर्ती सम्राट बने बैठे हैं।"[3] साधारण प्रजा की बेरोज़गारी का दृश्य अत्यन्त वास्तविकता के साथ कोहलीजी ने यहाँ व्यक्त किया है। वर्तमान भारतवर्ष में बेरोज़गारी की समस्या इतनी जटिल हो चुकी है कि उसकी किसी भी अन्य समस्या से तुलना नहीं की जा सकती।

मानवसमाज में वर्गभेद सदैव से चला आ रहा है और आज भी भेदभाव चल रहा है। समाज के उच्चवर्ग प्रायः निम्नवर्ग का शोषण करते आ रहे हैं। उच्चवर्गीय समाज में निम्न वर्ग के प्रति एक नाकारात्मक दृष्टिकोण ही कायम है। सदियों तक चली आई इसी दुर्व्यवस्था को कोहलीजी ने उपन्यास में कर्ण के माध्यम से चित्रित किया है। सूतपुत्र होने के कारण द्रोणाचार्य कर्ण को कोरवों के साथ शिक्षा देने के लिए तैयार नहीं हो जाते हैं। कर्ण के शब्दों में वर्गभेद का दर्द कोहलीजी ने प्रदर्शित किया है...

"आचार्य ने मुझे स्पष्ट कह दिया है कि मेरा और तुम्हारा वर्ग पृथक है। तुम्हारे वर्ग में प्रवेश करने का मेरा दुःसाहस उन्हें रुचिकर नहीं है। मुझे यह जीवन, बुद्धि, रणकौशल्य इसलिए मिला है कि मैं युद्ध में सारथि के रूप में क्षत्रिय राजकुमारों की सेवा करूँ अथवा सैनिक के रूप में उनके लिए अनाम, कीर्तिशून्य मृत्यु का वरण करूँ।"[4] आज तक कितने ही कर्ण वर्गभेद का शिकार बन जाता है। कदम-कदम पर उनकी प्रतिभा को दबाया गया है।

नारी अपहरण, बलात्कार, हत्याओं का सिलसिला हर युग में जारी रहा है। 'महासमर' उपन्यास शृंखला में कोहलीजी ने विभिन्न नारी पात्रों पर हुए अत्याचारों को हृदयविदारक रूप देकर हमारे सामने प्रस्तुत किया है। चित्रांगत और विचित्रवीर्य के साथ शादी कराने के लिए भीष्म अम्बा, अम्बिका, अम्बालिका तीनों राजकुमारियों का अपहरण किया है। अम्बा सबसे बड़ी थी। भीष्म के अत्याचार पर अम्बा अपना विरोध प्रकट करती है और कहा कि वह अन्य किसी से प्रेम करती है इसलिए भीष्म उसे बाँध नहीं सकते। अम्बा अपनी प्रेमी के पास जाना चाहती है। भीष्म उसे प्रेमी के पास भेजा लेकिन अन्य पुरुष द्वारा अपहरण करने के कारण प्रेमी शल्व अम्बा को तिरस्कृत कर दी और आजीवन अपहरण का कलंक लेकर तड़पती रही। अपनी आलम्बहीन हालत में दुःखी होकर अम्बा यों कहती है "क्या नारी होना ही अपने आप में असमर्थता का पर्याय है? क्या पराधीन होना, शोषित होना, कष्ट सहना चुप रहना यही नारी की नियती है?"[5] संघर्ष करने पर भी पराजित होनेवाली नारी का प्रतिरूप अम्बा में देख सकते हैं। उपन्यास में वर्णित नारी सम्बन्धी समस्याएँ जिसक

Scanned with CamScanner

सम्बन्ध नारी सुरक्षा से है उसके जड़ में पुरुष की विकृत मानसिकता ही रहती है। इस मानसिकता को ही सबसे पहले परिवर्तन आना चाहिए।

उच्चवर्ग आम आदमी की स्वतन्त्रता एवं अधिकारों का अपहरण एकजुट विरोध के अभाव के कारण ही करती है। ऐसी स्थितियाँ 'महासमर' में सर्वत्र पाई जा सकती हैं। स्वार्थ, भ्रष्टाचार, शोषणवृत्ति आदि के कारण सामान्य जनता की स्थिति और भी शोचनीय बन पड़ी है। आम आदमी को इन क्रूर स्थितियों, विसंगतियों का शिकार होना पड़ता है। व्यवस्था के प्रति आम जनता की गहरे असन्तोष की अभिव्यक्ति कोहलीजी ने 'महासमर' में व्यक्त किया है। जान, मान, इज्जत सभी के लिए आम जनता असुरक्षित है। नरेन्द्र कोहली का 'महासमर' आज के आम आदमी के शोषण की कथा कहता है।

सन्दर्भ

1. कर्म, नरेन्द्र कोहली, वाणी प्रकाशन, प्रसं. 1999, पृ. 221
2. वही, पृ. 245
3. अधिकार, नरेन्द्र कोहली, वाणी प्रकाशन प्र.सं. 1990, पृ. 116
4. वही, पृ. 181
5. बन्धन, नरेन्द्र कोहली, वाणी प्रकाशन, प्र.सं. 1988, पृ. 15

Scanned with CamScanner

'परम्परा का मूल्यांकन' : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

हेलन मेरी ए.जे.

शोधछात्रा, हिंदी विभाग,
कोच्चिन यूनिवर्सिटी ऑफ साइंस एंड टैक्नोलॉजी, कोच्चि-682 022

डॉ. रामविलास शर्मा हिंदी की प्रगतिवादी समीक्षा में एक प्रधान व्यक्तित्व हैं। एक रचनाकार के रूप में हिंदी संसार से उनका सम्बन्ध प्रथमतः एक कवि के रूप में स्थापित हुआ था। सन् 1943 में अज्ञेयजी द्वारा सम्पादित 'तार सप्तक' नामक काव्य संकलन के एक कवि के रूप में भी उन्हें ख्याति मिली। लेकिन प्रगतिशील आन्दोलन के विकास के साथ-साथ उनका कवि व्यक्तित्व पीछे रहा और एक समीक्षक के रूप में ही वे विशेष समादृत हुए। आज हिंदी संसार उन्हें प्रगतिवादी समीक्षा धारा के प्रतिनिधि समीक्षक के रूप में स्वीकार कर चुका है।

उनके आलोचना कार्य में 'परम्परा का मूल्यांकन' नामक ग्रन्थ की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका है। इस ग्रन्थ का प्रकाशन सन् 1981 में हुआ। इसमें भिन्न विषयों को लेकर 20 निबन्ध संकलित हैं। पहले निबन्ध को ग्रन्थ के शीर्षक के रूप में स्वीकार किया गया है।

इस ग्रन्थ का मूल विषय 'परम्परा का मूल्यांकन' शीर्षक पहले निबन्ध से ही स्पष्ट हो जाएगा। इस निबन्ध में उन्होंने साहित्यिक परम्परा के मूल्यांकन करने की कोशिश की है। शर्माजी ने परम्परा के मूल्यांकन को भारत में समाजवादी व्यवस्था कायम करने के संघर्ष के साथ जोड़ दिया है। रामविलास शर्मा जी बताते हैं कि

"समाजवादी संस्कृति पुरानी संस्कृति से नाता नहीं तोड़ती, वह उसे आत्मसात करके आगे बढ़ती है।"[1] यहाँ उनके मार्क्सवादी दृष्टिकोण विद्यमान है। उन्होंने मार्क्सवाद को परम्परा के साथ जोड़ने का प्रयास किया है। वे इस बात पर ज़ोर देते हैं कि रूढ़ियाँ तोड़कर क्रान्तिकारी साहित्य सृजन करने के लिए साहित्य की परम्परा का ज्ञान सबसे ज्यादा आवश्यक है। रामविलासजी विचारों से मार्क्सवादी हैं। इसलिए स्वाभाविक है कि वे ऐसी परम्परा की खोज में लगते जो प्रगतिशील साहित्य के निर्माण में सहायक हो सकती। उन्होंने कहा—"साहित्य की परम्परा के ज्ञान से ही प्रगतिशील आलोचना का विकास होता है।"[2] स्वयं उन्होंने हिंदी मार्क्सवादी आलोचना का विकास इसी तरह किया है। उनके अनुसार "प्रगतिशील आलोचना किन्हीं अमूर्त सिद्धान्तों का संकलन नहीं है। वह साहित्यिक की परम्परा का मूर्त ज्ञान है।"[3] इस प्रकार उन्होंने इस निबन्ध के माध्यम से हमारे साहित्य की परम्परा का वस्तुनिष्ठ और सुसंगत मूल्यांकन करके हिंदी साहित्य के इतिहास को एक नई दृष्टि दी है।

'हिंदी जाति के सांस्कृतिक इतिहास की रूपरेखा' शीर्षक निबन्ध में हिंदी भाषा की विकास परम्परा और हिंदी भाषी प्रदेश में जातीय निर्माण की प्रक्रिया का परिचय दिया गया है। शर्माजी कहते हैं "जाति के गठन में व्यापारियों द्वारा पूँजीवादी सम्बन्धों के प्रसार की नियामक भूमिका होती है। इस भूमिका को पूरा करने में एक सुव्यवस्थित सामंती राज्य व्यापारी वर्ग की सहायता कर सकता है।"[4] तात्पर्य यह है कि जातियों के निर्माण में 'व्यापार' और 'वितरण' की अहम भूमिका होती है। उनका मत यह है कि हिंदी भाषा और हिंदी जाति का उदय एक साथ और एक ही समय होता है। दोनों एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं। वे भिन्न-भिन्न देशी भाषाओं के नाम पर भिन्न-भिन्न जातियाँ मानते हैं जैसे हिंदी जाती, बंगला जाति आदि।

'तुलसी की भक्ति' शीर्षक निबन्ध में रामविलासजी ने लिखा है कि तुलसीदास हिंदी के पहले कवि हैं जिनकी रचनाओं में कवि का व्यक्तित्व इतना उभरकर आया है। उनके अनुसार तुलसी को अपनी भक्ति पर गर्व नहीं है, उन्हें अपनी साहित्य रचना पर सहज अभिमान है। रामविलासजी बतलाते हैं कि दरिद्रता पर जितना अकेले तुलसीदास ने लिखा है, उतना किसी दूसरे कवियों ने न लिखा होगा। दरिद्रता का दुःख ऐसा है जिसे संसार को माया कहकर मिटाया नहीं जा सकता। 'तुलसी साहित्य के सामंत विरोधी मूल्य' शीर्षक निबन्ध में अत्यन्त प्रामाणिक ढंग से उन्होंने यह दिखलाया है कि तुलसी की भक्ति का गहरा सम्बन्ध सामाजिक उत्पीड़न से है। उनका दर्शन लोकोन्मुख है। इस प्रकार हम देखते हैं कि तुलसीदास अपनी रचनाओं के माध्यम से तत्कालीन समाज के अन्तर्विरोधों का चित्रण करके सामंतवाद के प्रति अपना विरोध प्रकट करते हैं। रामविलासजी के शब्दों में "तुलसी

Scanned with CamScanner

को निकालकर हिंदी साहित्य की परम्परा से सम्बन्ध जोड़ना असम्भव है। इस परम्परा में जो मूल्यवान है, जो कुछ सदा के लिए संग्रह करने योग्य है, तुलसी में सुरक्षित है, और बहुत बड़ी मात्रा में सुरक्षित है।''[5]

आधुनिक साहित्य के प्रारम्भिक प्रवर्तक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तथा उस युग के अन्य साहित्यकारों के प्रति भी शर्माजी ने सम्मान दर्शाया है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के साहित्य का मूलस्वर देशभक्ति को स्वीकार करते हुए रामविलासजी ने उन्हें 'जातीय नवजागरण के वैतालिक' की संज्ञा दी है।

छायावादी कवियों के अन्तर्गत रामविलासजी ने निराला को सर्वाधिक महत्त्व प्रदान किया है। उनकी दृष्टि में निराला जनवादी परम्परा के कलाकार हैं जिनके साहित्य की जड़ें देश की साधारण जनता में गहरी चली गई हैं। साहित्यकार के व्यक्तित्व को कृतित्व से अलग नहीं किया जा सकता। उनका कृतित्व उनके व्यक्तित्व की सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। रामविलास जी ने निराला को 'क्रान्ति के कवि' कहा है। उनके शब्दों में ''इसमें सन्देह नहीं, निराला का व्यक्तित्व विद्रोही था, उन्होंने निर्भीक चिन्तन की परम्परा स्थापित की है।''[6] निराला की क्रान्ति का लक्ष्य भारत को विदेशी पराधीनता से मुक्त करना ही नहीं, जनता के सामाजिक जीवन में मौलिक परिवर्तन करना भी है।

रामविलासजी प्रेमचन्द के साहित्य की जनवादी परम्परा के मुक्तकण्ठ से प्रशंसक हैं। उनके अनुसार प्रेमचन्द ने अपनी यथार्थवादी लेखनी से जीवन की सच्चाइयों का उद्घाटन किया है। रामविलासजी के अनुसार प्रेमचन्द के उपन्यास और कहानी साहित्य में भारतवर्ष के दलित एवं पीड़ित वर्ग की वाणी सुनाई देती है। प्रेमचन्द के सम्बन्ध में वे लिखते हैं—''प्रेमचन्द के यथार्थवाद का स्रोत उनकी देशभक्ति, जनता के लिए उनकी गहरी सहानुभूति है। उनकी रचनाओं में विदेशी शासकों के लिए तीव्र घृणा है। उन्होंने साम्प्रदायिकता और जातिप्रथा का लगातार विरोध किया क्योंकि इन्हें दो हथियारों से देश की प्रतिक्रियावादी जनता में बराबर फूट डालने की कोशिश करते थे।''[7] इस उद्धरण में रामविलासजी प्रेमचन्द के यथार्थवाद को संक्षेप में रेखांकित कर देते हैं। 'प्रेमचन्द' शीर्षक निबन्ध में रामविलासजी ने प्रेमचन्द के अलग-अलग उपन्यासों का विश्लेषण करते हुए उनका सम्बन्ध भारतीय स्वाधीनता संग्राम से जोड़ते हैं। 'सेवासदन' की नारी मुक्ति की समस्या, 'प्रेमाश्रम' की लगान की समस्या, 'कर्मभूमि' की अछूत किसानों की भूमि समस्या, 'गोदान' की महाजनी-जमींदारी कर्ज की समस्या—इन सभी का सम्बन्ध स्वाधीनता आन्दोलन से जुड़ जाता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि हिंदी आलोचना के लिए रामविलासजी का योगदान महत्त्वपूर्ण है। 'परम्परा का मूल्यांकन' नामक इस ग्रन्थ में शर्माजी ने परम्परा का विश्लेषण किया है। प्रगतिशील के सन्दर्भ में परम्परा-बोध एक बुनियादी

मूल्य है। दूसरे शब्दों में बिना साहित्यिक परम्परा को समझे साहित्यिक रचना नहीं हो सकती है। लेकिन परम्परा में जो सार्थक है उसे उसका मूल्यांकन किए बिना नहीं अपनाया जा सकता। यह ग्रन्थ परम्परा के इसी सार्थकता की तलाश का प्रतिफलन है।

सन्दर्भ

1. परम्परा का मूल्यांकन, रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. सं. 1981, पृ. 15
2. वही, पृ. 9
3. वही
4. वही, पृ. 20
5. वही, पृ. 83
6. वही, पृ. 121
7. वही, पृ. 145

Scanned with CamScanner

नरेन्द्र कोहली के उपन्यास महासमर में अभिव्यक्त मानवाधिकार

हेलन मेरी ए. जे

मानव अधिकारों का जन्म पृथ्वी पर मनुष्य के विकास के साथ ही हुआ, क्योंकि इन अधिकारों के बिना वह न तो गरिमा के साथ जीवन यापन कर सकता था और न सभ्यता तथा संकृति का विकास कर सकता है। सामान्य शब्दों में हम कह सकते हैं कि मानव अधिकार वे अधिकार हैं जिनसे मानव के सम्मान और स्वतंत्रता को पोषण मिलता है। इनसे मानव का स्वतंत्र और सर्वांगीण विकास संभव है।

भारत के मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम १९९३ के अनुसार मानवाधिकार की परिभाषा इस प्रकार है -

Human Right means the right relating to life,liberty,equality and dignity of the individual guaranteed by the constitution or embodied in the international covenants and enforceable by Court in India." 1

अर्थात्,

मानवाधिकारों से तात्पर्य संविधान द्वारा प्रत्याभूत अथवा अंतर्राष्ट्रीय-प्रतिज्ञा पत्रों में सम्मिलित एवं भारत में न्यायालयों द्वारा प्रवर्तित ऐसे अधिकारों से हैं किसी भी व्यक्ती के जीवन, स्वतंत्र्य, समानता व उसकी वैयक्तिक गरिमा से संबंध रखते हो और जिनकी संविधान द्वारा गारण्टी दी गयी हो। यह वह अधिकार भी है जिन्हें अंतर्राष्ट्रीय संविदाओं में शामिल

Scanned with CamScanner

किया गया हो और जिन्हें भारत के न्यायालयों द्वारा लागू किया जा सके।

अतः इस परिभाषा से यहाँ स्पष्ट है कि सभी मानव समान है और उन्हें समान मानवाधिकार प्राप्त है । ये अधिकार हर जगह, हर समय, और हर स्थिति में मानव को उपलब्ध है । मानवाधिकार मानव जाति के समग्र विकास केलिए आवश्यक होते है । साथ ही साथ ये मानवीय गरिमा के पोषण के लिए भी अनिवार्य है । ये किसी व्यक्ती को उसके जन्म से ही प्राप्त हो जाते हैं और इनकी प्राप्ति में लिंग, राष्ट्रीयता, धर्म और रंग बाधक नहीं होती है।

यहाँ यह बताना काफी प्रासंगिक होगा कि मानवाधिकारों का प्रश्न तभी उठता है जब किसी के अधिकारों का दमन होता है। जैसे जैसे अत्याचार बढते है वैसे वैसे मानवाधिकारों की माँग भी जोर पकडने लगती है। आजकल मानवाधिकारों कि रक्षा होने की बजाय उसका उल्लंघन बढता जाता है । समकालीन साहित्यकार इस समस्या को लेकर काफी चिंतित है। जहाँ-जहाँ मानवाधिकार का उल्लंघन होता है, वहाँ रचनाकार अपनी तूलिका के माध्यम से इसके प्रति अपना विरोध जाहिर करता है। साथ ही साथ अपने सृजनकार्य के ज़रिए सामान्य जनता को उनके अधिकार के प्रति सजग रहने केलिए प्रेरणा देता है। समकालीन उपन्यासकारों में नरेन्द्र कोहली एक ऐसे व्यक्तित्व है जो समकालीन जिंदगी की वास्तविकता से जुडकर उपन्यास को समृद्ध बनाने में सक्रिय योगदान दे रहे हैं। महाभारत को केन्द्र में रखकर लिखित उनका महासमर नामक उपन्यास साहित्यकारों एवं पाठकों के बीच काफी चर्चित कृति है। मानवाधिकार से संबंधित चर्चाएँ किसी न किसी रूप में

इस उपन्यास में अभिव्यक्त हुई है।

वास्तविकता यह है कि आज हमारे समाज में स्त्री, दलित, पर्यावरण जैसे हाशिएकृत वर्ग सबसे ज्यादा शोषण का शिकार बन जाते है। कहने को संविधान में महिलाओं को पुरुषों के बराबर दर्जा प्राप्त है। लेकिन वास्तविकता यह है कि पुरुष वर्चस्ववादी समाज में महिलाओं की स्थिति दोयम दर्जा की ही बनी हुई है।

महिलाओं की सबसे बडी समस्या है विभिन्न प्रकार का उत्पीडन। दुर्भाग्य की बात है कि औरतों को घर के बाहर के साथ-साथ घर के भीतर भी यौन उत्पीडन का शिकार होना पडता है। यौन उत्पीडन से महिलाओं को संरक्षण प्रदान करने के लिऐ हमारे कानून में विशेष प्रावधान किऐ गऐ है। अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम 1956 के अनुसार महिलाओं के प्रति यौन शोषण करने को अपराध माना गया है । इस अपराध के लिए तीन वर्ष तक के कारवास तथा अर्थदण्ड की व्यवस्था की गयी है। कानूनी प्रावधान होने के बाद भी नारी हमेशा यौन उत्पीडन का शिकार बन जाती है। नरेन्द्र कोहली के उपन्यास 'महासमर' में द्रौपदी का खुले आम बलात्कार करने का प्रयास किया गया है। द्यूत खेल के उपरांत भरी सभा में दुर्योधन और दुशासन ने द्रौपदी का अपमान किया। युधिष्ठर धर्म की बात कहकर इस अन्याय को निस्सहाय से अनदेखा करता है। पाँच पतियों की पत्नी द्रौपदी लोगों के अश्लील तानों की शिकार हुई। इस बात को लेकर कर्ण ने द्रौपदी को वेश्या कहा। कर्ण बोला "द्रौपदी कुलवधु नही है। पाँच पतियों की भार्या कुलवधु कैसे हो सकती है? वह कुलटा है। वह वेश्या है । दुशासन! तुम पांडवों के सामने इस वेश्या के वस्त्र उतार, उसे निर्वस्त्र कर दो ।" [2] उपन्यास में चित्रित यह घटना समसामयिक नारी

Scanned with CamScanner

यौन उत्पीडन की अनेक घटनाओं की याद दिलाती है ।

समकालीन जीवन में दहेज प्रथा एक सामाजिक कोढ के रूप में उभरी है । दहेज प्रथा कानूनी जुर्म है । दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 के द्वारा दहेज जैसी गंभीर समस्या पर अंकुश लगाने की कोशिश की गई है । इस अधिनियम के महत्व को ध्यान में रखते हुऐ इस कानून में समय-समय पर संशोधन किए गए है। सन 1986 में पारित संशोधित अधिनियम की धारा 3 के तहत दहेज देने अथवा लेनेवाले दोनों ही व्यक्तियों को दोषी ठहराया गया है । दहेज लेने अथवा देनेवाले को पाँच साल की सज़ा की व्यवस्था की गई है । दहेज एक ऐसी सामाजिक कुरीति है जो बेटी के माता-पिता को कभी चैन की नींद नहीं देती है ।

'महासमर' उपन्यास में नरेन्द्र कोहली इसी यथार्थ को उजागर करते है। विद्या की माँ कहती हैं "कुँआरी कन्या की तो रक्षा ही कठिन है और विवाह की बात सोचो तो दहेज का पिशाच मुँह बाय खडा है।"[3] दहेज के कारण विवाह जैसे पवित्र संबंध व्यापार में परिणत हो गये है ।

स्त्रियों को अपने जीवन साथी चुनने का अधिकार आज भी समाज नही देता है । उनकेलिऐ जीवन साथी उनके अभिभावक ही खोजते है । यदि कोई स्त्री पहल करे तो भी परिवार और समाज खुलकर उसका विरोध करते है । मानवाधिकार संबंधि घोषणा पत्र के अनुच्छेद 16 के तहत भरपूर आयू के किसी भी नस्ल, राष्ट्रीयता या धर्म के पुरुषों और स्त्रिओं को विवाह करने और परिवार बनाने का अधिकार है । विवाह वर-वधु की स्वतंत्र और पूर्ण सहमति से ही किया जाएगा । 'महासमर' में अंबिका और अंबालिका को इसी यातना से गुजरना पडा । विचित्रवीर्य से शादी करने केलिऐ भीष्म ने काशीराज्य की दो कन्याओं अंबिका और

अंबालिका का अपहरण किया । अंबिका और अंबालिका को अपनी इच्छा के विरुद्ध विचित्रवीर्य से शादी करनी पडी। अंबिका और अंबालिका अपने जीवन के विनाश के लिए एकमेव भीष्म को जिम्मेदार मानती है ।

अतः कहा जा सकता है की अकेले कानून के बूते महिलाओं की समस्या को नहीं बदला जा सकता । दहेज और बलात्कार से संबंधित कानून कडे करने के बाद भी इनके दर में कमी आने के बजाय बढोत्तरी हो रही है । अनेक कानूनन प्रावधान होने पर भी महिलाओं की स्थिति में सकरात्मक बदलाव नहीं आता है। वास्तविकता यह है कि आज भी महिलाओं को संपूर्ण मानवाधिकार हासिल नही हो पा रहा है।

मानव समाज में वर्गभेद सदैव से चला आ रहा है और आज भी भेदभाव चल रहा है। घोषणा पत्र के अनुच्छेद 2 वर्गभेद के विरोध में बनाऐ गए हैं। इस अनुच्छेद के तहत प्रत्येक व्यक्ति को जाति, रंग, लिंग, भाषा, धर्म या अन्य विचारधाराओं के किसी भी प्रकार के भेदभाव के बिना निर्दिष्ट अधिकारों एवं स्वतंत्रता का अधिकार है । कानूनी प्रावधान के बावजूद आज भी हमारे समाज में वर्गभेद एक ज्वलंत समस्या है । सदियों तक चली आयी इसी दुर्व्यवस्था को कोहलीजी ने उपन्यास में कर्ण के माध्यम से चित्रित किया है । सूतपुत्र होने के कारण द्रोणाचार्य कर्ण को कौरवों के साथ शिक्षा देने केलिऐ तैयार नहीं हो जाता है । कर्ण के शब्दों में वर्गभेद का दर्द कोहलीजी ने प्रदर्शित किया है । कर्ण ने दुर्योधन से कहा -

"आचार्य ने मुझे स्पष्ट कहा है कि मेरा और तुम्हारा वर्ग पृथक है । तुम्हारे वर्ग में प्रवेश करने का मेरा दुःसाहस उन्हें रुचिकर नही है।[4]

Scanned with CamScanner

संजीव के 'धार' उपन्यास में अभिव्यक्त पारिस्थितिक सजगता

•

हेलन मेरी ए.जे.

मनुष्य और प्रकृति का अभेद्य सम्बन्ध है। लेकिन प्रगति की तेज रफ्तार में मनुष्य ने प्रकृति से नाता तोड दिया है। उपभोग मनोवृत्ति से ग्रसित मानव की दृष्टि में प्रकृति महज़ मुनाफा कमाने का साधन बन गयी है। जो प्रकृति हमारी रक्षक है, हमारी सम्पदा का मूलाधार है उसका शोषण आज हो रहा है। इसकी मुख्य वजह मनुष्य का लालच है। प्रकृति के शोषण के साथ जल और वायु को भी विषलिप्त किया जाता है। इस पारिस्थितिक विनाश से साहित्यकार सजग हुए। इसकी मिसाल है आजकल का उपन्यास। स्पष्ट है कि पर्यावरण विमर्श समकालीन उपन्यास का मुख्य मुद्दा बन गया है। पर्यावरण पर होनेवाले हमले का दुष्परिणाम सबसे पहले आदिवासी जनजातियों को भुगतना पड़ता है, क्योंकि आदिवासी जीवन का प्रकृति के साथ गहरा सम्बन्ध है। इसलिए पर्यावरण विनाश के कारण आदिवासी समूह अपने क्षेत्र के खास वैशिष्ट्य से वंचित होते हैं अपनी ज़मीन से विस्थापित होते हैं और आखिर इस संसार से भी। संजीव ने 'धार' उपन्यास में प्राकृतिक विनाश के विभिन्न आयामों को विस्तृत मायने में परखने की रचनात्मक पहल की है।

'धार' उपन्यास में संजीव ने सन्थाल परगना का हरा-भरा गाँव बाँसगड़ा और छोटा नागपुर के कोयला खदानों में काम करनेवाले श्रमजीवी आदिवासियों की बदहालत को उजागर करने का प्रयास किया है। पूँजीपतियों, कोलमाफियाओं, ठेकेदारों और दलालों का बहुआयामी

शोषणतन्त्र बाँसगड़ा अंचल के आदिवासीय जीवन में वैषम्य पैदा करता है। सन्थाल आदिवासी अपने इलाके के लोगों को रोज़गार मिलने की खुशी में पूँजीपति महेन्दर बाबू को तेज़ाब का कारखाना खोलने के लिए अपनी ज़मीन दान में दे देता है। कारखाना खुलने पर महेन्दर बाबू आदिवासी मज़दूरों से कमरतोड़ काम करवाता है लेकिन वेतन नहीं देता है। ज़्यादातर बेरोज़गार आदिवासी जुए खेलकर या शराब पीकर अपनी ज़िन्दगी बर्बाद करते हैं।

तेज़ाब का कारखाना बाँसगड़ा के पर्यावरण को दूषित करने के साथ सन्थाल आदिवासियों को उनके परम्परागत कृषिकार्य से भी बेदखल करता है। कारखाने से उत्सर्जित गिलाजत से खेती-बाड़ी, कुएँ सब ख़राब हो जाता है। तेज़ाब की वर्षा में बाँसगड़ा की फ़सलों का नुकसान होता है। तेज़ाब से दूषित पानी पीकर पशु-पक्षी मर जाते हैं। गाँव वालों को पीने के लिए दो बूँद पानी भी मयस्सर नहीं। तेज़ाब की फैक्टरी से निकलने वाली ज़हरीली हवा से बाँसगड़ा की हरियाली सूख रही है, जंगल मुरझा गया है। धूप और धुएँ से बस्ती जल रही है। गाँव वाले खाँसी, उबकाई आदि बीमारियों की गिरफ्त हैं।

उपन्यास की सशक्त नारी पात्र मैना कारखाने से उत्पन्न पर्यावरण संकट की भीषण परिणतियों से आदिवासियों को अवगत कराती है। फैक्टरी से बाँसगड़ा के पर्यावरण में आये नकारात्मक परिवर्तन का बयान मैना के मुँह से संजीव प्रस्तुत करते हैं-"हमको याद आता, जब हम बच्चा था, खेती से चार-छे महीने का काम चल जाता। एक दिन का भी नईं। खेत-खतार, पेड़ रूख, कुआँ, तालाब हम और हमारा बाल-बच्चा तक आज तेज़ाब गल र आ है, भूख में जल र आ है।"[1]

गाँववालों के ज़ोरदार विरोध से फैक्टरी का काम बन्द हो जाता है। फैक्टरी बन्द होने पर महेन्दर बाबू बाँसगड़ा में अवैध कोयला खनन शुरू करते हैं। महेन्दर बाबू की कोयला खदानें आदिवासी मजदूरों के कमरतोड़ प्रयत्न पर खड़ी हैं। लेकिन महेन्दर बाबू जैसे पूँजीपतियों की दृष्टि में आदिवासी मजदूरों का स्थान नगण्य है। सेफ्टी इंजीनियर जब कोयला खदान की न्यूनताओं का जिक्र करता है तब महेन्दर बाबू का कथन इसका साक्ष्य है-"चींटियाँ दम जाये या मर जाये, दैट्स नॉट माई हेडेक, हम कैसे सेफली ज़्यादा से ज़्यादा उगाह सकें हमें यह देखना है, हमने पैसा फँसाया है साहब, पुलीस और आप लोगों को

देते–दिलाने इतना पैसा तो बचना चाहिए कि हम वर्कर्स का पेमेण्ट दे सकें, दो–चार पैसे अपने बाल–बच्चों के लिए भी रख सकें।"[2]

अवैध कोयला खनन से बाँसगड़ा गाँव प्रायः उजाड़ हो जाता है। बाँसगड़ा के स्त्री–पुरुष खेती के अभाव में रात–भर अवैध कोयला खनन करते हैं। लेकिन इससे भी गुजारा सम्भव न होने के कारण आदिवासियों को ठेकेदारों के अधीन में रहकर सस्ती मज़दूरी में काम करना पड़ता है। परम्परागत धंधों की कमी के कारण अर्थोपार्जन के लिए बाँसगड़ा के स्त्री–पुरुष भीख माँगते हैं, चोरी करते हैं, शराब बेचते हैं। भूख के मारे कूड़ागाड़ी से जूठन बटोरकर खाते बच्चों का संकेत उपन्यास में मिलता है। कुल मिलाकर आर्थिक अभाव के कारण सन्थाल आदिवासियों की ज़िन्दगी सड़ती जा रही है।

कोयले के अवैध उत्खनन से उजाड़ हो गये बाँसगड़ा को बचाने की खातिर उपन्यास की सशक्त नारी पात्र, जनमोर्चा की कार्यकर्त्ता अविनाश शर्मा अन्य आदिवासियों के सहयोग से जनखदान का निर्माण करती है। इसी के साथ ही वह जनखदान में आदिवासी मजदूरों के हर प्रकार के उन्नयन और सुरक्षा के लिए सारा बन्दोबस्त करती है और गरीबी व शोषण से तंग आकर वेश्यावृत्ति अपनाने के लिए विवश आदिवासी औरतों को इज्जतदार ज़िन्दगी प्रदान करती है। इसके अलावा मैना जनपद में पर्यावरण सन्तुलन बरकरार रखने के लिए किये गये वृक्षारोपण में अपनी सक्रिय भागीदारी निभाती है। अर्थात मैना अपनी जाति और पर्यावरण के अस्तित्व रक्षा हेतु आजीवन संघर्ष करती है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि औद्योगिक इकाई से निकलने वाले प्रदूषण प्राकृतिक संसाधनों पर ही नहीं बल्कि जीव–जन्तुओं और मनुष्य के अस्तित्व पर भी खतरनाक प्रभाव डाल रहे हैं। अतः औद्योगिक विकास अभिशप्त बनकर प्राकृतिक सन्तुलन को बिगाड़ देता है। 'धार' औद्योगिकीकरण से उत्पन्न पारिस्थितिक आघातों का विस्तृत ब्योरा प्रस्तुत करने वाला सशक्त उपन्यास है।

सन्दर्भ

1. संजीव, धार, पृ. 90
2. वही, पृ. 110

□□

Scanned with CamScanner

नवजागरणकालीन उपन्यास 'देवरानी-जेठानी की कहानी' में स्त्री जागरण

हेलन मेरी ए. जे

शोध-छात्र,
कोच्ची विज्ञान व प्रौद्योगिकी
विश्वविद्यालय, कोच्ची-22

उपन्यास गद्य साहित्य का एक तीखा औजार है। नवजागरणकालीन उपन्यास हिन्दी उपन्यास की चौखट माने जाते हैं। इसलिए साहित्य के क्षेत्र में उनका अपना विशिष्ट स्थान है। नवजागरणकालीन समाज में अँग्रेजी शासन चल रहा था। भारतवासी अँग्रेजों के गुलाम थे। एक ओर भारतवासी अँग्रेजी कुशासन से त्रस्त थे तो दूसरी तरफ समाज में अनेक प्रकार की बुराइयाँ जैसे कि अन्धविश्वास, छुआछूत आदि से भी पीड़ित था। साहित्यकार समाज में व्याप्त अनेक समस्याओं के बारे में सजग है। नवजागरणकालीन साहित्यकार ने उपन्यास को काल्पनिकता के से यथार्थ के धरातल पर खड़ा कर दिया है। नवजागरणकालीन उपन्यास साहित्य नयी सोच से रूपायित हुआ है। उपन्यासकार ने तत्कालीन समाज में प्रचलित बुराइयों और अन्धविश्वासों के विरोध में आक्रोश व्यक्त किया। साथ ही इन सब समस्याओं को समाज से मिटाकर सामाजिक सुधार का प्रयास भी किया है। उपन्यास की इन समस्याओं से लोगों का ध्यान आकर्षित करके इसके प्रति विरोध जाहिर करने का आह्वान भी किया गया है। इसी से देशोन्नति प्राप्त करना उपन्यासकारों का मकसद रहा है।

नवजागरणकालीन उपन्यास लोगों में राष्ट्रीय एकता का उमंग रूपायित करने में विशेष भूमिका निभा रही थी। उपन्यासों में हमारी अपनी संस्कृति की प्रतिष्ठा करने की प्रवृत्ति प्रचुर मात्रा में वर्तमान था। नवजागरणकालीन समय में हिन्दी भाषा और नागरी लिपि के विकास, स्त्री-शिक्षा, विधवा-विवाह, भारतीय वाणिज्य व्यवसाय की उन्नति आदि के समर्थन तथा बाल-विवाह, वृद्धा विवाह,

शादी-ब्याह के अवसरों पर होने वाले अपव्यय, अन्धविश्वास आदि के विरोध में आन्दोलन चल रहा था। इन सभी आन्दोलनों के केन्द्र में 'राष्ट्रीय चेतना' मुख्य पहलू रहा था। नवजागरणकालीन उपन्यास इस राष्ट्रीय चेतना की ही अभिव्यक्ति है।

नवजागरणकालीन उपन्यास साहित्य में गौरी दत्त शर्मा द्वारा लिखित 'देवरानी-जेठानी की कहानी' एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। 'देवरानी-जेठानी की कहानी' की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें पहली बार परम्परा से हटकर कथा कहने का प्रयास किया गया है। यह राजा-सेठ की कहानी न होकर साधारण वैश्य परिवार की कहानी है। यह उपन्यास सर्वसुख नामक व्यापारी की पारिवारिक कहानी है, जो साधारण बनिए समाज का अंग है। तत्कालीन बनिए समाज की सांस्कृतिक और पारिवारिक स्थिति, उसके आचार-विचार, रीति-रिवाज तथा घरेलू जीवनचर्या का प्रामाणिक विवरण इस उपन्यास में उपलब्ध है। 'देवरानी-जेठानी की कहानी' पुनर्जागरण की चेतना से सीधे जुड़ी हुई रचना है। वस्तुतः स्त्री-शिक्षा ही इस उपन्यास का केन्द्रीय कथ्य है, यद्यपि बनिए समाज की तत्कालीन जीवन-दशा का अंकन भी इसमें मिलता है।

'देवरानी-जेठानी की कहानी' का केन्द्र विषय नारी-शिक्षा है। सर्वसुख की दो बहुएँ हैं जिनमें देवरानी शिक्षित नारी है और जेठानी अशिक्षित है। पूरे उपन्यास में देवरानी और जेठानी की तुलना की गयी है ताकि पाठक यह बात समझ सके कि पढ़ी-लिखी नारी और अनपढ़ नारी में क्या अन्तर है। देवरानी का चरित्र अच्छे गुणों से युक्त है। परिवार कैसे सँभालना है, पति का देखभाल कैसे करना है ऐसी बातों पर देवरानी की विशेष रुचि है। देवरानी को स्वावलम्बी चरित्र के रूप में पेश किया गया है। लेकिन जेठानी अशिक्षित है। अशिक्षित होने की वजह से वह समय के मूल्य से अज्ञात है। लेकिन देवरानी उससे भिन्न है। घर का सारा काम निपटने के बाद कभी वह भगवद्गीता के श्लोक पढ़ती है उस पर टिप्पणी करती है। कभी-कभी तुलसीदास और सूरदास के भजन गाती है। लेकिन जेठानी इन सब बातों पर कोई भरोसा नहीं रखती है। उसके लिए अपना घर सँभालना ही सबसे बड़ी बात है। जेठानी के चरित्र के द्वारा उपन्यासकार ने तत्कालीन स्त्रियों में प्रतिबिम्बित अशिक्षा, अन्धविश्वास, अज्ञान आदि का अंकन किया है। देवरानी और जेठानी की तुलना करके उपन्यासकार यह व्यक्त करना चाहते हैं कि समाज का सुधार स्त्रियों की शिक्षा से ही सम्भव है।

उपन्यास में सर्वसुख की बेटी सुखदेई को देवनागरी की शिक्षा देने की बात कही गयी है। सुखदेई की माँ अपनी बेटी को शिक्षित करने के मुद्दे पर अपना वक्तव्य प्रकट करती है कि 'जब सुखदेई पढ़ जायेगी चिट्ठी-पत्र लिखनी आ जायेगी। घर का हिसाब लिख लिया करेगी।' सुखदेई की माँ का यह कथन बहुत ही महत्वपूर्ण है। क्योंकि लड़की शिक्षा-दीक्षा करने के बाद स्वावलम्बी बन जाती है। पुरुष के आश्रय के बिना वह कुछ भी कर सकती है। शिक्षा मिलने से नारी को पुरुष से अलग होकर अपनी एक पहचान मिल जाती है। तत्कालीन समाज में घर का हिसाब जैसे विषय पर नारी की कोई भूमिका नहीं रही थी। क्योंकि पुरुष नहीं चाहते थे कि नारी उस पर प्रश्न करें। इसलिए उसे शिक्षा से दूर रखा। लेकिन शिक्षित नारी पुरुष के बराबर घर का सभी कार्य सँभाल सकती है, हिसाब भी लिख सकती है। उपन्यासकार ने नारी-शिक्षा का महत्व उजागर कर नारी को दोयमीय अवस्था से ऊपर उठाने की कोशिश की है। परिवार में नारी को भी पुरुष के बराबर भूमिका निभानी है, यह व्यक्त करना उपन्यासकार का मकसद रहा है।

वास्तव में सुखदेई को देवनागरी की शिक्षा देने की बात उपन्यासकार के हमारी सांस्कृतिक प्रेम को दिखाता है। देवनागरी की शिक्षा देने की बात उपन्यासकार ने इसलिए उठाया कि देवनागरी भाषा

Scanned with CamScanner

हमारी संस्कृति से सीधे जोड़ी गयी है। उपन्यासकार का देशप्रेम भी यहाँ व्यक्त है, क्योंकि देशप्रेम का पहला पड़ाव है अपनी भाषा के प्रति लगाव। यह नवजागरण की चेतना का यथार्थ है।

उपन्यास में नारी के साथ-साथ पुरुष को भी शिक्षा दिलाने पर भी जोर दिया गया है। सर्वसुख का छोटा बेटा छोटेलाल शिक्षित नौजवान है। शिक्षा के बाद उसे एक दफ्तर में अच्छा काम मिलता है। शिक्षित होने के कारण उसका ब्याह भी शिक्षित लडकी के साथ होता है। उपन्यास में छोटेलाल और पत्नी को आदर्श दम्पति के रूप में चित्रित किया गया है। दोनों के आपसी प्यार को उपन्यास में इस प्रकार सूचित किया गया है कि 'यह बात परमेश्वर की दया से होती है कि दोनों स्त्री-पुरुष के चित्त इस तरह से मिल जायें। यह कुछ अचम्भे की बात भी नहीं है। दिल तो वहाँ नहीं मिलता जहाँ मर्द पढ़ा हुआ हो और स्त्री बेपढ़ी। जब यह दोनों मिलते, एक-दूसरे को देख बड़े प्रसन्न होते। इधर वह उसके मन की बात पूछती और अपनी कहती। इधर उसको इस बात का बड़ा ही ध्यान रहता कि कोई बात ऐसी न हो कि जिससे इसका मन दुःखे'[2] छोटेलाल और उसकी पत्नी के बीच का गहरा सम्बन्ध पाठकों के लिए अनुकरणीय बन जाता है।

सर्वसुख और उनकी पत्नी के माध्यम से उपन्यासकार ने दहेज के प्रति अपना सकारात्मक दृष्टिकोण व्यक्त किया है। सर्वसुख और उनकी पत्नी दोनों शादी के अवसर पर घर आने वाली लड़की को ही 'लक्ष्मी' मानता है। दौलतराम की शादी के अवसर सर्वसुख की पत्नी कहती है कि 'तुम दौलतराम की सगाई रख लो। आयी हुई लक्ष्मी घर से कोई नहीं फेरता और रुपया-पैसा हाथ-पैरों का मैल है'।[3] सर्वसुख की पत्नी के दहेज सम्बन्धी यह मनोभाव हम पाठकों के लिए प्रेरणात्मक है। वे लोग शादी के अवसर पर पैसों को महत्त्वपूर्ण पहलू नहीं मानते थे।

दौलतराम की बेटी की शादी उनकी तुलना में आर्थिक रूप से कम सम्पन्न व्यक्ति से तय होती है। पैसों के सम्बन्ध में सर्वसुख का उच्च विचार उनके इस कथन से स्पष्ट है 'मैंने तो घर-वर दोनों अच्छे देख लिये है। उनका बड़ा कुटुम्ब है। सदा चलन है। लड़का लिखा-पढ़ा है। दूकान का कारोबार अपने हाथ से करे है और बड़ा चतुर है। रुपया-पैसा किसी की जाति नहीं ऊपर की टीप-टाप अच्छी नहीं होती'।[4] सर्वसुख पैसों के स्थान पर शिक्षा को सर्वोपरी मानता है। उसके अनुसार उसकी पौत्री पढ़े-लिखे एक आदमी के साथा ज्यादा खुश रह जायेगी।

लड़का-लड़की के बीच भेदभाव जैसी ज्वलन्त समस्या को भी उपन्यास में उकेरा गया है। शादी के बाद जेठानी को लड़की और देवरानी को लड़का पैदा हुआ। लड़की का जन्म बुरी बात के रूप में तत्कालीन समाज मानते हैं। इसलिए जेठानी स्वयं को भाग्यहीन मानती है। तत्कालीन समाज में नहीं बल्कि आज भी लड़की माता-पिता को बोझ लग रही है। लड़की को कभी अपना नहीं मानता है। शादी के बाद उसे दूसरे घर में जाना है। इसलिए मायके में उसकी कोई भूमिका नहीं है। लड़की को हमेशा पराया ही मानता है। वह सोचती है कि ससुराल में वह राज करेगी, लेकिन जिस नारी को अपने खुन ही इज्जत और प्यार न देते, उसे दूसरे घर में वह कैसे प्राप्त कर सकती है? नारी-सम्बन्धी समाज के कुत्सित विचार में अवश्य परिवर्तन आना चाहिए। वरना नारी की स्थिति निम्न से निम्नतर हो जायेगी।

उपन्यास में दबी आवाज में सही विधवा-विवाह का समर्थन किया गया है। छोटेलाल की पत्नी के मामा की बेटी दस वर्ष की आयु में विधवा हो गयी। उपन्यासकार ने छोटेलाल की पत्नी की जबान से कहा कि हमारे धर्म-शास्त्र में विधवा-विवाह का समर्थन किया गया है। छोटेलाल की बहू कहती है कि 'धर्म-शास्त्र में भी लिखा है कि जिस स्त्री का उसके पति से सम्भाषण नहीं हुआ हो

और विवाह के पीछे पति का देहान्त हो जाये, तो वहाँ पुनर्विवाह योग्य है। अर्थात् उस स्त्री का दूसरा विवाह कर देने से कुछ दोष नहीं'।[5] उस समाज में नारी खुद के लिए आवाज न उठा पाती थी लेकिन इस कथन में छोटेलाल की पत्नी उस दस साल की बच्ची के लिए आवाज उठाती नजर आती है। तत्कालीन समाज में विधवा-विवाह का समर्थन इतने जोर से नहीं किया गया फिर भी उपन्यासकार ने विधवा-विवाह सम्बन्धित अपनी सोच को निडर प्रस्तुत किया है।

'देवरानी-जेठानी की कहानी' में नवजागरण के अनेक पक्ष प्रस्तुत किये गये हैं। उपन्यास का मुख्य विषय स्त्री-शिक्षा है। उपन्यास में गौरीदत्त शर्मा ने शिक्षित नारी और अशिक्षित नारी की तुलना की है। नारी को शिक्षा दिलाने की आवश्यकता और अशिक्षित होने के कारण मध्यवर्गीय परिवारों में स्त्रियों की हीन दशा का अंकन किया गया है। 'देवरानी-जेठानी की कहानी' में इस मुद्दे के साथ तत्कालीन बनिए समाज की सांस्कृतिक और पारिवारिक स्थिति, उसके आचार-विचार, पर्व-त्योहार, रीति-रिवाज, जन्म-विवाह और मृत्यु-सम्बन्धी संस्कार तथा घरेलू जीवनचर्या का चित्रण भी उपलब्ध है। इस उपन्यास के माध्यम से लेखक राष्ट्र-सम्बन्धी अपना विचार व्यक्त करते हैं। लेखक के मन में एक ऐसा राष्ट्र का सपना है जिसकी अपनी भाषा हो, जहाँ की स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी हों, युवक चरित्रवान हो, समाज अन्धविश्वासों और तर्कहीन रीति-रिवाजों से मुक्त हो, नारी को निर्णय लेने की स्वतन्त्रता हो, दहेजप्रथा कतई ना हो।

सन्दर्भ

1. गौरीदत्त शर्मा, देवरानी-जेठानी की कहानी, ऋषभचरण जैन एवं सन्तति प्रकाशन, प्रथम संस्करण 1986, पृ. 10
2. वही, पृ. 14
3. वही, पृ. 11
4. वही, पृ. 37
5. वही, पृ. 33

Scanned with CamScanner